

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 4 अध्याय 11: मनु व ध्रुव

21 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



युद्ध के धुएँ के बीच, पूज्य स्वायम्भुव मनु, ऋषियों से घिरे, अपने पौत्र पर कोमल हाथ रखते हैं और युवा राजा के हृदय को प्रतिशोध से मोड़कर पुनः एक भक्त की शान्ति की ओर ले आते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

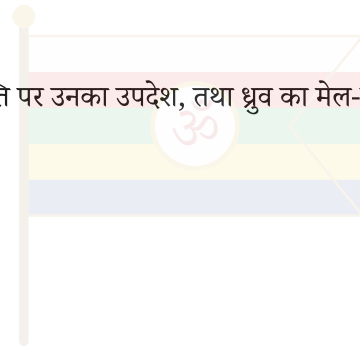
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पिछले अध्याय में, शोकाकुल ध्रुव अपने मारे गए भाई का प्रतिकार करने यक्षों की नगरी पर चढ़ आया, और एक भीषण युद्ध छिड़ा, यहाँ तक कि ऋषि प्रकट होकर उसे भगवान् के नाम से आशीर्वाद देने लगे। यह एकादश अध्याय उसी क्रोध को शान्ति की ओर मोड़ता है। जैसे-जैसे युद्ध बढ़ता है

और निर्दोष प्राण जाते हैं, ध्रुव के पितामह, स्वायम्भुव मनु, ऋषियों के साथ आते हैं और उससे बात करते हैं — कोमलता से, एक प्रेमी वृद्ध की भाँति — उसे स्मरण कराते हुए कि प्रतिशोध तथा वध उन जनों का मार्ग नहीं जो इन्द्रियों के स्वामी का अनुसरण करते हैं, कि जिस शरीर का वह शोक करता है और जिन शरीरों पर वह प्रहार करता है, वे समान रूप से अनित्य हैं, और कि उसकी सच्ची महिमा भक्ति में है, विजय में नहीं। इस विवेकपूर्ण तथा कोमल उपदेश से द्रवित होकर, ध्रुव विनम्र हो जाता है, अपना क्रोध त्याग देता है, और अपनी सेना लौटा लेता है। यह वह अध्याय है जहाँ एक भक्त का शोक विनम्रता से भरता है, और एक योद्धा पुनः सन्त बन जाता है।

अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 4 (चतुर्थ स्कन्ध)
- अध्याय: 11 (एकादश अध्याय)
- अध्याय का शीर्षक: स्वायम्भुव मनु द्वारा ध्रुव को युद्ध से विरत करने का उपदेश
- मुख्य वक्ता: महर्षि मैत्रेय, विदुर को अपने उपदेश की निरन्तरता में (जिसमें स्वायम्भुव मनु के वचन उद्धृत हैं)
- मुख्य श्रोता: विदुर
- मुख्य स्थल: अलकापुरी, यक्षों की नगरी के समक्ष रणभूमि
- केन्द्रीय विषय: मनु का करुणापूर्ण हस्तक्षेप, अहिंसा, अनित्यता तथा भक्ति पर उनका उपदेश, तथा ध्रुव का मेल-मिलाप
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 4, अध्याय 11, श्लोक 1-35
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अध्याय 10 ने ध्रुव के भाई उत्तम की एक यक्ष के हाथों मृत्यु तथा ध्रुव के शोक-प्रेरित अलकापुरी पर आक्रमण की कथा कही। जैसे-जैसे युद्ध छिड़ा और यक्ष माया-युद्ध की ओर मुड़े, महर्षि प्रकट होकर युवा राजा को स्थिर करने तथा भगवान् के नाम से आशीर्वाद देने आए। यह एकादश अध्याय तब आरम्भ होता है जब ध्रुव, उनके वचन सुनकर, एक महान् अस्त्र उठाता है — और युद्ध पुनः तीव्र हो उठता है।

अस्त्र तथा संहार

ऋषियों के वचन ग्रहण करते हुए, ध्रुव ने आचमन किया और तदुपरान्त स्वयं नारायण द्वारा रचित महान् अस्त्र अपने धनुष पर सन्धान किया। यक्षों की मायाओं के विरुद्ध छोड़े जाने पर, उसने उनकी माया बिखेर दी और उनकी पंक्तियों पर बाणों की वर्षा की।

मैत्रेय उवाच

निशम्य गदतामेवमृषीणां धनुषि ध्रुवः ।

सन्दधेऽस्त्रमुपस्पृश्य यन्नारायणनिर्मितम् ॥ १ ॥

maitreya uvāca nīśamya gadatām evaṃ ṛṣīṇāṃ dhanuṣi dhruvaḥ sandadhe 'stram upaspr̥śya yan nārāyaṇa-nirmitam

अर्थ: मैत्रेय ने कहा: ऋषियों को इस प्रकार बोलते सुनकर, ध्रुव ने अपने धनुष का स्पर्श किया और उस पर नारायण द्वारा रचित अस्त्र सन्धान किया। (स्कन्ध 4, अध्याय 11, श्लोक 1)



ऋषियों को सुनकर, ध्रुव अपने धनुष का स्पर्श करता है और उस पर नारायण द्वारा रचित महान् अस्त्र सन्धान करता है, और यक्षों की मायाओं के विरुद्ध युद्ध पुनः भड़क उठता है (श्लोक 1-5)।

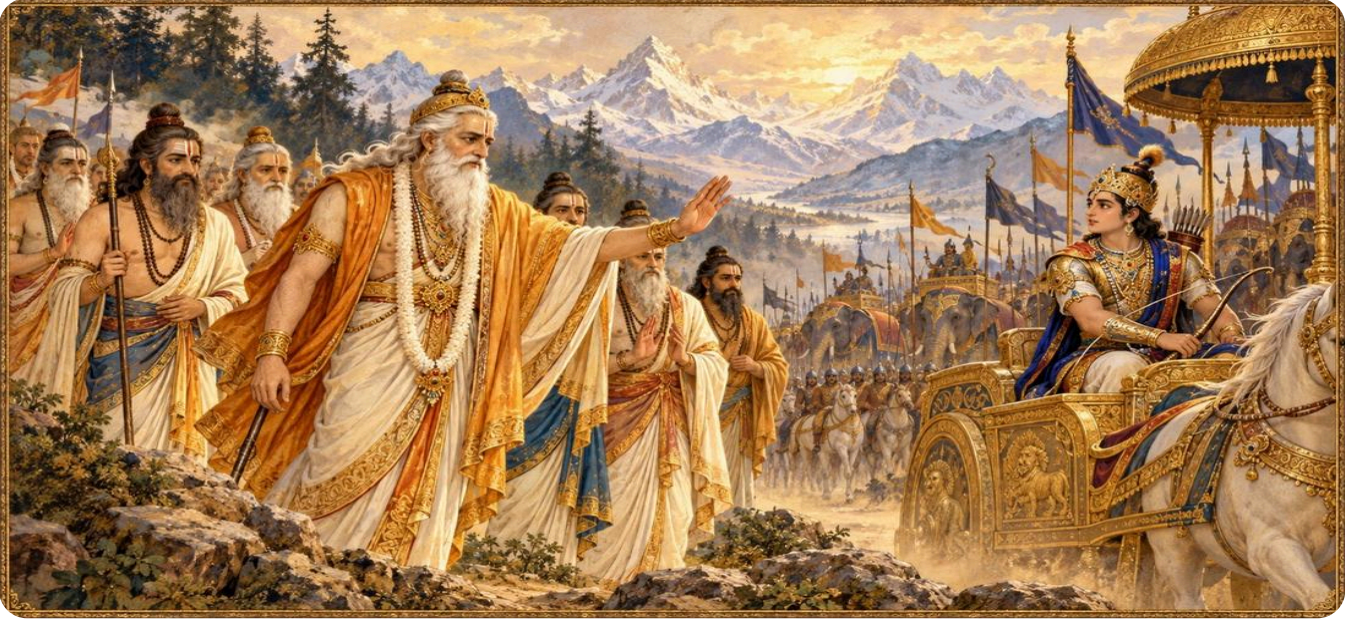
पितामह की करुणा

अस्त्र ने महान् विनाश किया, और अनेक यक्ष — कुछ उत्तम की मृत्यु से निर्दोष — मारे गए। यह देखकर, तथा उन पर करुणा से द्रवित होकर जिन्होंने कोई अपराध न किया था, ध्रुव के पितामह स्वायम्भुव मनु ऋषियों के साथ रणभूमि पर आए और उससे बोले।

तान् हन्यमानानभिवीक्ष्य गुह्यका-
ननागसश्चित्ररथेन भूरिशः ।
औत्तानपादिं कृपया पितामहो
मनुर्जगादोपगतः सहर्षिभिः ॥ ६ ॥

tān hanyamānān abhivīkṣya guhyakān anāgasaś citra-rathena bhūrīśaḥ auttānapādim kṛpayā pitāmaho manur jagādopagataḥ saharṣibhiḥ

अर्थ: ध्रुव के अद्भुत रथ द्वारा निर्दोष गुह्यकों को बड़ी संख्या में मारा जाता देख, पितामह मनु, करुणा से, ऋषियों के साथ आए और उत्तानपाद के पुत्र से बोले। (स्कन्ध 4, अध्याय 11, श्लोक 6)



निर्दोष प्राणों को जाता देख दुखी, ध्रुव के पितामह स्वायम्भुव मनु ऋषियों के साथ रणभूमि पर आते हैं और, प्रेमवश, युवा राजा को परामर्श देना आरम्भ करते हैं (श्लोक 6-9)।

मनु ने कोमलता से आरम्भ किया। उन्होंने ध्रुव की भक्ति की सराहना की और उससे कहा कि ऐसा क्रोध केवल आत्मा को अन्धकार में ले जाता है; जितना हुआ, बहुत हुआ। फिर उन्होंने अपने उपदेश का हृदय कहा, उस स्वभाव का नाम लेते हुए जिसमें भगवान् के सेवक को कभी नहीं गिरना चाहिए: इस शरीर को आत्मा मान लेना, और, पशु की भाँति, दूसरों के शरीरों पर टूट पड़ना।

नायं मार्गो हि साधूनां हृषीकेशानुवर्तिनाम् ।

यदात्मानं परागृह्य पशुवद्भूतवैशसम् ॥ १० ॥

nāyaṁ mārgo hi sādḥūnāṁ hṛṣīkeśānuvartinām yad ātmānaṁ parāg gṛhya paśuvad bhūta-vaiśasam

अर्थ: यह उन सन्तों का मार्ग नहीं जो इन्द्रियों के स्वामी हृषीकेश का अनुसरण करते हैं — कि शरीर को आत्मा समझें और, पशुओं की भाँति, दूसरे प्राणियों के शरीरों का वध करें। (स्कन्ध 4, अध्याय 11, श्लोक 10)

मनु ने फिर उसी गुण का नाम लिया जो हृषीकेश के ऐसे सेवक की पहचान है, और जो स्वयं भगवान् को भी संतुष्ट करता है। सहनशीलता, करुणा, मैत्री, तथा प्रत्येक देहधारी प्राणी के प्रति समान दृष्टि — मित्र, अपरिचित तथा उसी अपराधी के प्रति भी समान रूप से विस्तारित, जिसे ध्रुव दण्ड देना चाहता था — ही उस भगवान् को, जो सबके भीतर आत्मा रूप में वास करते हैं, गहराई से संतुष्ट करते हैं। जहाँ ध्रुव के बाणों ने अपने और पराए के बीच एक कठोर रेखा खींच दी थी, मनु उससे उस रेखा को मिटाने का आग्रह करते हैं, और मित्र तथा शत्रु दोनों को एक ही खुले हृदय से ग्रहण करने को कहते हैं।

तितिक्षया करुणया मैत्र्या चाखिलजन्तुषु ।

समत्वेन च सर्वात्मा भगवान् सम्प्रसीदति ॥ १३ ॥

अर्थ: सहनशीलता, करुणा, मैत्री, तथा प्रत्येक प्राणी के प्रति समता से, सर्वात्मा भगवान् वास्तव में प्रसन्न होते हैं। (स्कन्ध 4, अध्याय 11, श्लोक 13)

मनु का उपदेश

मनु ने एक व्यापक तथा उपचारक विवेक प्रकट किया। उन्होंने ध्रुव को स्मरण कराया कि समस्त प्रतीत कारणों के पीछे केवल परम भगवान् ही सच्चे कर्ता हैं; कि जिस यक्ष ने उत्तम को मारा वह भाग्य का एक साधन मात्र था, जैसे उत्तम का अपना पूर्व कर्म भी; कि शोक, दोषारोपण, तथा प्रतिशोध आत्मा को शरीर की मायाओं से बाँधते हैं। एक यक्ष ने उसके भाई को मारा था, फिर भी ध्रुव एक समस्त जाति का संहार कर रहा था — यह विषमता शोक से जन्मी, न्याय से नहीं। बुद्धिमान्, मनु ने कहा, चोट का बदला चोट से नहीं चुकाते; वे सबमें एक भगवान् को देखते हैं, और अपने हृदय को उन्हीं में विश्राम देते हैं।

मनु ने और आगे बढ़कर वह गहनतम कारण प्रकट किया कि उत्तम का सच्चा वधकर्ता किसी को भी उचित रूप से नहीं कहा जा सकता। स्वयं परम भगवान् कभी कोई शस्त्र नहीं उठाते; वे पृथक् रहते हैं, फिर भी उनके मात्र आवेग से प्रकृति का सम्पूर्ण चक्र गति में आ जाता है, एक कारण दूसरे कार्य को जन्म देता है, ठीक वैसे ही जैसे बिखरा हुआ लोहा उस चुम्बक की आज्ञा मानता है जिसे वह कभी छूता नहीं (श्लोक 17)। अपने काल-स्वरूप में, वे ही प्रत्येक प्राण के सच्चे संहारक हैं — अनादि, यद्यपि समस्त वस्तुओं के आदि हैं, तथा अक्षय, यद्यपि उन्हीं के द्वारा शेष सब क्षीण होता है — जबकि वे स्वयं न कभी जन्मते हैं न मरते हैं (श्लोक १८-१९)। प्रत्येक प्राणी पिता के द्वारा उत्पन्न होता है और मृत्यु के द्वारा नष्ट होता है, परन्तु मृत्यु स्वयं उन्हीं का निष्पक्ष हाथ है, जो न किसी का पक्ष लेता है न किसी से द्वेष रखता है, प्रत्येक आत्मा केवल अपने ही पूर्व कर्मों का फल भोगती है (श्लोक 20)। इस दृष्टि से देखने पर, न तो यक्ष और न ध्रुव का अपना शोक, किसी भी वस्तु का सच्चा कारण होने का दावा कर सकते हैं।

और उन्होंने ध्रुव को इस समस्त शोक से परे का एकमात्र मार्ग दिखाया: अपनी भक्ति को पूर्णतः उस अन्तर्यामी, अनन्त, परमानन्दमय भगवान् की ओर मोड़ने का, जब तक कि झूठे अहंभाव की कसकर बँधी डोरी अन्ततः खुल न जाए।

त्वं प्रत्यगात्मनि तदा भगवत्यनन्त
आनन्दमात्र उपपन्नसमस्तशक्तौ ।
भक्तिं विधाय परमां शनकैरविद्या-
ग्रन्थिं विभेत्स्यसि ममाहमिति प्ररूढम् ॥ ३० ॥

*tvaṁ pratyag-ātmani tadā bhagavatya ananta ānanda-mātra upapanna-samasta-śaktau bhaktim
vidhāya paramāṁ śanakair avidyā- granthim vibhetsyasi mamāham iti prarūḍham*

अर्थ: जब तू अन्तर्यामी, अनन्त भगवान् पर परम भक्ति अर्पित करेगा, जो शुद्ध आनन्द हैं तथा समस्त शक्तियों से सम्पन्न, तब तू अविद्या की उस दृढ़ ग्रन्थि को — “मैं” तथा “मेरा” की गहरी जड़ जमी भावना को — धीरे-धीरे काट देगा। (स्कन्ध 4, अध्याय 11, श्लोक 30)



मनु अपने पौत्र के लिए एक उपचारक विवेक खोलते हैं: कि प्रतिशोध आत्मा को बाँधता है, कि समस्त प्राणी भगवान् की योजना के भीतर कर्म करते हैं, और कि केवल भक्ति ही 'मैं' तथा 'मेरा' की ग्रन्थि को काटती है (श्लोक 10-33)।

ध्रुव का शान्त होना

मनु के वचन उस हृदय पर पड़े जो, अपने समस्त शोक के बावजूद, अब भी एक भक्त का था। ध्रुव ने अपने पितामह के परामर्श को हृदय में धारण किया, अपना क्रोध छोड़ा, और युद्ध बन्द कर दिया, रणभूमि से अपनी सेना लौटा ली। इस प्रकार अपने पौत्र को उपदेश देकर, स्वायम्भुव मनु ने ध्रुव के श्रद्धापूर्ण प्रणाम स्वीकार किए, और ऋषियों के साथ अपने धाम को लौट गए।

एवं स्वायम्भुवः पौत्रमनुशास्य मनुर्ध्रुवम् ।

तेनाभिवन्दितः साकमृषिभिः स्वपुरं ययौ ॥ ३५ ॥

evam svāyambhuvaḥ pautram anuśāsy manur dhruvam tenābhivanditaḥ sākam ṛṣibhiḥ svapuram yayau

अर्थ: इस प्रकार स्वायम्भुव मनु, अपने पौत्र ध्रुव को उपदेश देकर, उसके द्वारा श्रद्धापूर्वक प्रणत हुए, और ऋषियों के साथ अपने धाम को लौट गए। (स्कन्ध 4, अध्याय 11, श्लोक 35)



अपने पितामह के विवेक से द्रवित होकर, ध्रुव अपना क्रोध त्याग देता है, युद्ध बन्द करता है, और विनम्रता से प्रणाम करता है जबकि मनु तथा ऋषि शान्ति से विदा होते हैं (श्लोक 35)।

इस प्रकार एकादश अध्याय विजय में नहीं बल्कि विनम्रता में समाप्त होता है — युवा राजा का क्रोध शान्त, युद्ध समाप्त, और उसका हृदय पुनः भगवान् की ओर मुड़ा हुआ, उस कृपा के लिए तैयार जो अगला अध्याय लाएगा।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. शोक अन्याय न बने। ध्रुव ने एक के अपराध का दण्ड समस्त जाति को दिया, और मनु इस विषमता को उसका सच्चा नाम देते हैं: केवल एक ही यक्ष सच में दोषी था, और जो कुल धर्म के नियम को जानता है उसे निर्दोष तथा दोषी दोनों का संहार शोभा नहीं देता। शोक हमारे न्याय-बोध को विकृत कर सकता है; बुद्धिमान् अपने शोक को पूर्णतः अनुभव करना सीखते हैं बिना उसे अपने हाथ पर शासन करने दिए, चाहे उनका भावी भाग्य कितना ही सौभाग्यशाली क्यों न हो (श्लोक 6-11)।

2. भक्त का मार्ग पशु का मार्ग नहीं। शरीर को आत्मा समझना और दूसरों के शरीरों का वध करना, मनु कहते हैं, पशुओं का मार्ग है, उन सन्तों का नहीं जो इन्द्रियों के स्वामी का अनुसरण करते हैं। भक्ति हमसे शरीर से परे देखने को कहती है — अपने में तथा अपने शत्रुओं में भी (श्लोक 10)।

3. सबके प्रति समता ही भगवान् को प्रसन्न करती है। सहनशीलता, करुणा, मैत्री, तथा प्रत्येक प्राणी के प्रति समान दृष्टि — मित्र तथा अपराधी दोनों के प्रति — ही एक सच्चे भक्त के चिह्न हैं, और यही स्वभाव, न कि कोई विजय, वास्तव में उस भगवान् को संतुष्ट करता है जो सबके भीतर वास करते हैं (श्लोक 13)।

4. समस्त प्राणी भगवान् की योजना के भीतर कर्म करते हैं। न यक्ष, न स्वयं ध्रुव, अन्ततः किसी वध का कर्ता है। परम भगवान्, अनन्त काल के माध्यम से कार्य करते हुए, केवल प्रकृति के चक्र को घुमाते हैं; वे ही प्रत्येक प्राण के सच्चे संहारक हैं, यद्यपि स्वयं न कभी जन्मते न मरते हैं, और वे न किसी का पक्ष लेते हैं न किसी से द्वेष रखते हैं, प्रत्येक आत्मा केवल अपने ही कर्मों का फल भोगती है। इसे देखना दोष तथा प्रतिशोध का ज्वर घोल देता है (श्लोक 12-24, विशेषतः 17-20)।

5. भक्ति अहंकार की ग्रन्थि काटती है। गहनतम बन्धन “मैं” तथा “मेरा” की भावना है; और उसे काटने का सबसे निश्चित शस्त्र बल नहीं, बल्कि अनन्त भगवान् पर परम भक्ति है (श्लोक 30)।

6. सच्चा बल सुधारे जाने की विनम्रता है। ध्रुव, एक विजयी योद्धा, अपने वृद्ध के वचन पर अपना क्रोध त्याग देता है और प्रणाम करता है। विवेकपूर्ण परामर्श स्वीकार करना तथा मार्ग बदलना युद्ध में जीती किसी भी विजय से बड़ी विजय है (श्लोक 35)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

ध्रुव को सुधरते देखने में एक विशेष सौन्दर्य है। यह वही आत्मा है जिसने, एक बालक के रूप में, नारद के निरुत्साह तथा एक काँपते ब्रह्माण्ड के आतंक को अटूट संकल्प से देख लिया था। वह संकल्प उसकी महिमा था — और यहाँ वह लगभग उसका दोष बन गया, जैसे शोक ने उसकी दृढ़ता को क्रोध में मोड़ दिया। जो उसे बचाता है वह कोई बड़ा बल नहीं बल्कि एक कोमल बल है: उसके पितामह का प्रेममय वचन, और उसे सुनने की उसकी अपनी तत्परता। कितनी बार हमारे बल, असावधान रहने पर, हमारे दोषों में बदल जाते हैं — हमारी दृढ़ता हठ में, हमारा प्रेम अधिकार-भाव में, हमारा न्याय-बोध प्रतिशोध में। और कितनी बार ऐसे क्षण में हमें पराजित होने की नहीं बल्कि परामर्श पाने की आवश्यकता होती है — और उसे सुनने की विनम्रता की। मनु ध्रुव को लज्जित नहीं करते; वे उसे स्मरण कराते हैं कि वह कौन है। सम्पूर्ण अध्याय युवा राजा की उस स्मरण को ग्रहण करने तथा अपना धनुष रखने की तत्परता पर टिका है। यह हमसे कोमलता से पूछता है: जब शोक या क्रोध ने हमारे श्रेष्ठ गुणों को किसी हानिकर वस्तु में मोड़ दिया हो, तो क्या हम भी भगवान् की ओर पुनः मोड़े जाने के लिए इतने विनम्र होंगे?

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, उस विनम्रता का अभ्यास करें जो युद्ध समाप्त करती है। किसी ऐसी शिकायत को स्मरण करें जिसे आप ढो रहे हैं — आप पर या किसी प्रिय पर किया गया अन्याय — और, उसे दोहराने के बजाय, उसे इन शब्दों के साथ भगवान् को अर्पित करें — “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय”। ऐसा करते हुए, मनु के परामर्श को अपने लिए कहा हुआ सुनें: कि एक भगवान् समस्त वस्तुओं के पीछे खड़े हैं, कि प्रतिशोध केवल आत्मा को बाँधता है, और कि आपकी सच्ची शान्ति भक्ति में है, हिसाब चुकाने में नहीं। यदि मेल-मिलाप का कोई छोटा पग आप उठा सकते हैं — एक कठोर वचन रोका हुआ, क्षमा का एक भाव अर्पित — तो उसे आज उठाएँ जैसे ध्रुव ने अपनी सेना लौटा ली। हृदय के एक भी अस्त्र को रखकर, आप युवा राजा का अनुसरण क्रोध से पुनः भक्त की शान्ति तक करते हैं।

उपसंहार

चतुर्थ स्कन्ध का एकादश अध्याय ध्रुव के क्रोध को शान्ति की ओर मोड़ता है। जैसे ही उसके नारायण-अस्त्र ने यक्षों में विनाश किया, और निर्दोष भी मारे गए, उसके पितामह स्वायम्भुव मनु ऋषियों के साथ, करुणा से द्रवित होकर, आए और उसे परामर्श दिया। प्रतिशोध तथा वध, मनु ने सिखाया, हृषीकेश के सेवकों का आचरण कदापि नहीं हो सकते; उत्तम को मारने वाला यक्ष भी स्वयं से कहीं बड़े भाग्य की धारा में बहाया जा रहा था; शोक अन्याय न बने; भगवान् ही, अनन्त काल के माध्यम से कार्य करते हुए, प्रत्येक मृत्यु के पीछे का निष्पक्ष कारण हैं; और अहंकार की ग्रन्थि बल से नहीं बल्कि अनन्त भगवान् पर परम भक्ति से कटती है। इस विवेकपूर्ण तथा कोमल विवेक से द्रवित होकर, ध्रुव ने अपना क्रोध छोड़ा, युद्ध बन्द किया, और अपनी सेना लौटा ली, अपने पितामह को प्रणाम करते हुए, जो तब ऋषियों के साथ अपने धाम को लौट गए। इस प्रकार अध्याय विजय के बजाय विनम्रता में समाप्त होता है, युवा राजा का हृदय पुनः भगवान् की ओर मुड़ा हुआ — और उस कृपा के लिए तैयार जो उसकी प्रतीक्षा में है।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

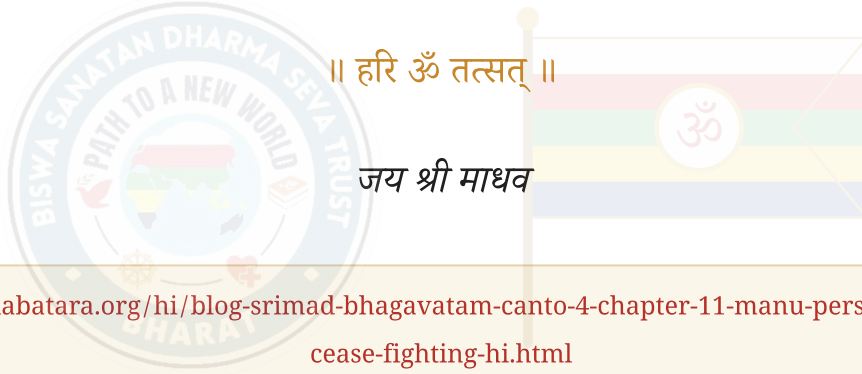
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, पूर्ण), चतुर्थ स्कन्ध, एकादश अध्याय।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा किसी सम्बद्धता या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।



ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-4-chapter-11-manu-persuades-dhruva-to-cease-fighting-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट